ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-6* September-2020
Anthology : The Research

संवेदना का सफर – नारी

Journey of Emotions - Woman

Paper Submission: 12/09/2020, Date of Acceptance: 26/09/2020, Date of Publication: 27/09/2020

रश्मि रंजन सिन्हा
पूर्व शोध छात्रा
हिन्दी विभाग,
भूपेंद्र नारायण मंडल
विश्वविद्यालय, लालू नगर,
मधेपुरा बिहार, भारत

सारांश

नर और नारी दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। किसी एक को भी जीवन से पृथक रखकर जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। दोनों के मिलन से ही जीवन पनप सकता है और सहयोग से ही सुचारु रुप से चल सकता है। इसके बावजूद भी नर और नारी की प्रकृति में काफी अंतर है और इसी अंतर के कारण जीवन का सही और सटीक होना संभव है। दोनों की प्रकृति यदि एक सी होती तो जीवन में सृष्टि में बैलेंस होना संभव नहीं था।

Both male and female complement each other. Life cannot be imagined by keeping any one separate from life. Life can only flourish & go smoothly with the union & cooperation of both. Despite this, there is a great difference in the nature of male and female and due to this difference it is possible for life to be right and accurate. If the nature of both were the same, it would not have been possible to balance the creation in life.

मुख्य शब्द : सभ्यता, वैदिक संस्कृति, मात्रिसत्तात्मक समाज, पित्तसत्तात्मक समाज, झीनी चिलमन।

Civilization, Vedic Culture, Normative Society, Patriarchal Society, Thin drapery.

प्रस्तावना

पथ की तृष्णा और बढ़ेगी
जब पांव में पड़ते छाले हैं।

पूरी दुनिया में नारी की स्थिति लगभग एक जैसी रही है। रूस अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, ईरान, इराक, टर्की, फिलिस्तीन, फिजी आदि सभी स्थानों पर पुरुषों ने नारी पर अमानवीय व्यवहार किया और नारी ने उसे सहा है । साथ ही साथ यह भी सच है कि सृष्टि के आरंभ से ही नारी ही पुरुषों की आकर्षण शक्ति और प्रेरणा रही है। सभ्यता पूर्व नारी ने कृषि कार्यों की शुरुआत भी इसलिए ही किया कि वह सभ्यता के मौलिक तत्वों को प्रतिष्ठित कर सके। बर्तन बनाना, गृह निर्माण आदि भी इसी के अंतर्गत आता है। इस काल में पुरुष वर्ग मुख्यतः पर्वतों, जंगलों आदि में भटक, शिकार कर भोजन का प्रबंध करता था। शारीरिक तौर पर मजबूत होने के कारण पुरुष वर्ग ने नारी के अधिकारों को हथियाना शुरू कर दिया। नारी से विवाह करना भी उनकी संपत्ति को अपने कब्जे में लेने का एक जरिया था। बदलती मानसिकता के कारण आदियुगीन समाज में एक बड़ा बदलाव हुआ। मातृसत्तात्यक समाज पितृसत्तावयक समाज में बदल गया। पिता के अधिकार में माता के सारे अधिकार चले गए। अबला नारी पुरुष की संपत्ति और दासी बन गई।

वैदिक काल

वैदिक काल हमारी सभ्यता का उषाकाल माना जाता है। यह काल नारी की स्थिति का स्वर्ण काल कहा जा सकता है। कहा गया है कि जितनी अच्छी नारी की स्थिति इस काल में थी उतनी आज तक के काल में नहीं हुई है। हमारे प्राचीनतम ग्रंथ वेदों में इनके पत्नी, माता और ऋषि रूप चित्रित हुए हैं। इस काल में नारियों का भी उपनयन संस्कार होता था। वे गुरुकुल में जाकर शिक्षा– दीक्षा लेती थी। साथ ही अपनी रुचि अनुसार अस्त्र–शस्त्र आदि की भी ट्रेनिंग लेती थी। इस समय नारी की सबसे मुख्य बात यह थी कि वह अपना निर्णय स्वयं लेती थी। नारी ब्रह्मवादिनी, ब्रह्मचारिणी, कुमारियाँ आदि होती थी, वह हवन पूजा–पाठ आदि भी करवाती थी, इसका एक रूप आज भी गायत्री शक्तिपीठ में देखने को मिलता है। वह पूर्णतः युवा होने पर अपनी इच्छा से गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करती थी या नहीं भी करती। अपनी इच्छानुसार अपना जीवन यापन करती थी। विवाह योग्य अपनी उम्र के युवकों से मिलती थी और

उनसे घनिष्ठ संबंध भी रखती थी। दहेज प्रथा, सती प्रथा, बाल विवाह, दोषपूर्ण विवाह आदि जैसी कुरीतियों का उल्लेख नहीं मिलता। इस काल का साधारण नियम एक पत्नी व्रत था, यदि बहुविवाह होता था तो विशेष कारणवश ही। घोषा, लोपा, मुद्रा वीश्वावरा आदि अनेक नारियाँ हैं इन सत्य अन्वेषित ब्रह्मवादिनीयों के मंत्र संकलन से ही हमारा सबसे पुराना वेद ऋग्वेद समृद्ध हुआ है। नारियों के कुशल गृहिणी होने की अमिट छाप भी मिलती है। इस काल में नारियाँ जहां नृत्य और संगीत कला में पारंगत होती थी वही रणभूमि में अपने पराक्रम का लोहा भी मनवाती थी। इस काल की नारियों के संदर्भ में यह कहना अनुचित नहीं होगाः–

सिर्फ चूड़ियाँ ही नहीं
शोभती थी हाथों में
वाद्य व तलवार भी
सिर्फ कुशल गृहिणी ही नही
हम थी बुद्धि विद्या की भंडार भी

आगम– निगम वेद करते जिस का बखान आज भी।

अब तक के कार्यों में नारी की उन्नति की पराकाष्ठा का काल वैदिक काल रहा है तो उनकी अवनति की शुरुआत का काल उत्तर वैदिक काल रहा है इस काल में नारी के बौद्धिक और धार्मिक क्षेत्रों की अधिकार और अनिवार्यता पर ग्रहण लग गया और सिर्फ नारी को जननी के रूप को सर्वश्रेष्ठ समझा जाने लगा। पुत्र जन्म को सौभाग्य पूर्ण और पुत्री जन्म को दुर्भाग्यपूर्ण माना जाने लगा। बाल–विवाह का उदय हुआ लेकिन विधवा विवाह या पुनर्विवाह का प्रावधान नहीं था। इस काल की नारियों को पति की मृत्यु हो जाने पर या किसी कारणवश पति संतान उत्पन्न करने में अक्षम हो तो वह परिवार की सहमति से कुल को आगे बढ़ाने के लिए पति के गोत्रज या उनके भाइयों से संतान खासकर पुत्र उत्पन्न कर सकती थी। इसे 'नियोग' का नाम दिया गया है लेकिन नियोग से उत्पन्न पुत्री कि कहीं चर्चा नहीं की गई है। वर्ण व्यवस्था के जन्म से नारियों का पुरुष गोष्ठियों में शामिल होना और पुरुषों से मिलना–जुलना बंद सा हो गया जिस कारण उनका अनुभव शिथिल होने लगा।

गुजरते समय के साथ ही नारी जीवन की जटिलता भी बढ़ती गई। ब्राह्मण ग्रंथों और सहिंताओं में ही नारियों का जीवन सिमट गया। वैदिक काल में जहाँ नारी अकेले ही पूरी यज्ञ कर सकती थी वहीं इस काल में वह पति के साथ भी पूरी अभिक्रिया में भाग नहीं ले सकती थी। उनकी कुछ क्रियाएँ पुरोहित द्वारा संपादित किए जाते थे, उनसे लगभग हुए सारे अधिकार एवं मान–सम्मान छीन लिए गए जो उन्हें वैदिक काल में प्राप्त है।

वैदिक और संस्कृत साहित्य की कड़ी कहे जाने वाले दो महाकाव्य रामायण और महाभारत में नारी का प्रचुर चरित्र चित्रण हुआ है। वैसे पुराणों में नारी के प्रति व्रत और सतीत्व धर्म पर ही अधिक बल दिया गया है। फिर भी इन दोनों कार्यों में नारी के मुख्यतः तीन रूप प्राप्त होते हैं एक तो पुरुष की इच्छा अनुसार अपनी जीवन यापन करना सीता, उर्मिला, मांडवी, सुकृति, कौशल्या, सुमित्रा,धोबी की पत्नी आदि इसी श्रेणी में आते हैं। दूसरी वे नारियाँ जो अपने बल पर अपनी तर्क संगति पर अपनी बात मनवा लेती हैं। इस श्रेणी में कैकई, मंथरा, राका (रावण की माँ) आती हैं। तीसरी वे नारियाँ हैं जो पति को सही मार्ग पर चलने के लिए हर संभव प्रयास करती हैं, लेकिन पति कि जिद के आगे घुटने टेक देती है, साथ ही अपने पतिव्रत धर्म का पालन करने के लिए पति के मंगल के लिए हर संभव प्रयास भी करती हैं। मंदोदरी, सुलोचना आदि इसी श्रेणी में आती हैं। महाभारत मैं द्रोपदी को छोड़कर मुख्यतः नारी के तीन रूपों का वर्णन मिलता है एक वर रूप जिसमें दोषयुक्त होने पर भी उसे आदर और गौरव की दृष्टि से देखा जाता है। रुकमणी, दमयंती, माधुरी, गांधारी, उत्तरा आदि इस श्रेणी में आती हैं। महाभारत में द्रोपदी एक ऐसी पात्रा है जो नारी जीवन की परिसीमाओं और शक्तियों का प्रतीक है । द्रौपदी के चरित्र में समग्र रूप से एक राजकुमारी, बेटी, महारानी, प्रेयसी, पत्नी, बहू, माँ और सबसे प्रबल अपने आत्मसम्मान की रक्षा करने के लिए कुछ भी कर गुजरने वाली नारी का रूप सामने आता है। द्रौपदी के चरित्र की दूसरी बड़ी विशेषता यह है कि जहाँ नारी के लिए दैहिक शुचिता और एक पतिव्रत धर्म पर बल दिया जाता था वही माता कुंती के अनजाने में दिए गए आज्ञानुसार पांच पतियों के पत्नी होने के बाद भी द्रौपदी को पतिव्रता माना जाता है। कुंती के माँ रूप को आदर और आलोचना दोनों मिलती है। एक ओर पांडव जहाँ माँ के आदेश पर पत्नी को आपस में बाँट देते हैं वही कुमारी माँ बनने और कर्ण का परित्याग करने पर उन्हें आलोचना भी मिलती है। गांधारी में पतिव्रत धर्म और पुत्र मोह की पराकाष्ठा दिखती है। अन्य राजाओं और जिसे हम भगवान मानते हैं स्वयं कृष्ण को सोलह हजार एक सौ आठ पत्नी का होना नारी का अपने आप में एक वर्ग उत्पन्न करता है।

जैन धर्म में नारी का आदर सम्मान या अपने समकक्ष अथवा उससे थोड़ा नीचे का स्थान देना तो दूर की बात रही उन्हें इतनी अवहेलना की दृष्टि से देखा जाने लगा कि पुरुष जीवन पर नारी की छाया भी पुरुषों को गर्त में डुबो देगी। इस काल में नारी को मायावी, चंचल, कृतघ्न, जलती अग्नि, नर्क का द्वार, विष बेल, मोक्ष मार्ग की बाधा आदि नामों से संबोधित किया जाने लगा।

इस काल के पुरुष वर्गों को स्वयं की क्षमताओं पर विश्वास नहीं था। शायद वह कहीं ना कहीं दिल ही दिल में नारी की क्षमताओं से डरते थे। इसलिए उन्होंने अपनी दुर्बलताओं को छुपाने के लिए यह मार्ग अपनाया।

बौद्ध धर्म में नारी की स्थिति में थोड़ा सुधार किया। इस धर्म में विवाहिता, अविवाहिता, विधवा, बंध्या, वेश्या आदि सभी को अपनाया लेकिन उनके प्रति पूरा न्याय नहीं कर पाया। फिर भी नारी की गिरी हुई स्थिति को उठाने का प्रथम प्रयास इस धर्म ने किया जिसके कार्य को सराहनीय माना जाना चाहिए।

स्मृति शास्त्र को भारतीय संस्कृतिनुसार राष्ट्र और समाज को उन्नत बनाने का ज्ञान प्रदान करने वाला शास्त्र कहा गया है। इस शास्त्र द्वारा मनु, व्यास, पाराशर, आदि ने नारी की स्थिति पर अधिक रोशनी डालने के

लिए विधानों से उसे जकड़ दिया है। मनु एक और नारी को सम्मान देते हैं, तो दूसरी ओर उसकी स्वतंत्रता के विरोधी भी हैं। नीति शास्त्र में अनेकानेक कथा द्वारा नारी – चरित्र पर आक्षेप किया गया है।

भारतीय संस्कृत साहित्य में महाकवि कालिदास ने अपनी रचनाओं में नारी के कहीं शिवत्व तो, कहीं सौंदर्य को चित्रित किया है। उनके अनुसार पुरुष अर्थ है तो नारी वाणी, पुरुष शिव है तो नारी शक्ति। उनकी दृष्टि में पुरुष के गुणों की अभिव्यक्ति नारी के बिना असंभव है जो काफी हद तक सच है। इनके अलावा भाषा, भारवि, दंडी, माघ आदि कवियों ने भी अपनी अपनी रचनाओं में दांपत्य प्रेम नायिका–भेद, नख–शिख, षदऋतु आदि वर्णन द्वारा नारी की चर्चा की है जो आज भी हृदयस्पर्शी है।

आदिकाल के हिंदी साहित्य में नारी का वर्णन सिर्फ शक्तिशाली पुरुषों की निजी संपत्ति के रूप में भोग्या, प्रेयसी आदि रूपों में ही दिखती है। इसे हम उस काल की तत्कालीन परिस्थिति की देन भी कह सकते हैं। फिर भी नारी की भावनाओं के प्रति यह काल बेवफा ही रहा।

भक्ति काल

भक्ति काल के कवियों ने नारी को आध्यात्मिक और ज्ञान क्षेत्र की प्रगति में बाधा माना है। उसे पथ–भ्रष्ट कराने वाली माया की संज्ञा दी है। इनकी नजर में नारी तो किसी लायक ही नहीं थी, पुरुषों को महान बनाने के लिए नारी का त्याग अनिवार्य था। लेकिन इस काल के मानव मन न रंगायो, रंगायो जोगी कपड़ा ही थे। वे देवी की तो पूजा अर्चना करते थे, उनकी भक्ति गुण गाते थे और नारी को त्याज्य बताते थे ।

रीतिकालीन कवियों ने तो नारी को सिर्फ हाड़मांस का एक जीता जागता खिलौना बना दिया। जिसे पुरुष अपनी संतुष्टि के लिए उसका शारीरिक और मानसिक उपयोग कर सकें। इस काल के कवियों ने खासकर दरबारी कवियों ने देवी–देवताओं के प्रेम वर्णन में भी खासकर कृष्ण राधा के प्रेम–वर्णन को वासना के रस में डुबोकर परोसा।

आधुनिक काल

आधुनिक काल का जनक भारतेंदु को माना गया है। यह काल प्राचीन और नई शैली का मिलन काल भी है। रीतिकालीन नारी इस काल में कुछ–कुछ मानवी बनने लगी। मूल रूप से कह ले तो दूषित हो चुके राष्ट्र समाज परिवार का पुनः एक स्वच्छ बीज भारतेंदु ने साहित्य द्वारा बोया।

द्विवेदी काल

द्विवेदी काल में, द्विवेदी जी ने भारतेंदु द्वारा बोए बीज को सुरक्षित कर पल्लवित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। सरस्वती नामक पत्रिका ने इसमें उर्वरक का काम किया। इस काल में राष्ट्र समाज और परिवार को नैतिकता का पाठ पढ़ाया जाने लगा। भारतेंदु युग में नारी का जो मानवीय रूप दृष्टिगोचर हो रहा था यहाँ उसी मानवी की भावनाओं और व्यथाओं को समझा जाने लगा। समाज में फैली कुप्रथाओं और विकृत मानसिकता पर यह कल प्रहार करने लगा।

छायावाद काल

छायावाद काल में सहमी हुई मानसिकता के मेघ पुनः छिट–फुट घिरने लगे । यहाँ नारी कहीं 'केवल श्रद्धा' है तो कहीं 'नीर भरी दुख की बदरी'। सच कहा जाए तो इस काल में कवियों ने नारी के व्यापक रूप को जन्म दिया। नारी के माँ, बेटी, पत्नी, दोस्त, प्रेयसी, अबला, सबला रूपों को चित्रित तो किया ही है, साथ ही आलंबन का सहारा लेकर उसे प्रकृति के कण–कण में विराजमान कर दिया है। इस काल के लेखकों ने नारी के साथ ही अनेक समस्याओं पर भी व्यापक दृष्टि डाली और लेखनी चलाई है।

छायावादोत्तर या प्रयोगवाद अथवा प्रगतिवाद काल

छायावादोत्तर या प्रयोगवाद अथवा प्रगतिवाद काल में कवियों और कलाकारों का कल्पना का खुमार उतर कर भौतिकता के धरातल पर आने लगा। इसके परिणाम स्वरूप कविता अपनी पुरानी कल्पनाओं की लच्छेदार श्रृंगार से निकलकर 'अप्रस्तुत' समाज से संबद्ध और मूर्त होने लगी। इस काल में पीड़ित और शोषित नारी के प्रति सहानुभूति व्यक्त की गई है तो साथ ही उसके अस्तित्व के विकास के लिए उसे प्रेरित भी किया गया। साहित्य जगत् में सबसे अधिक विविधताएँ इसी काल में दिखती हैं। इस काल में नारी कहीं अबला, कहीं संघर्षरत, कहीं सबला, तो कहीं पुरुषों को नैतिकता का ज्ञान देती हुई चित्रित हुई है,तो कहीं अपना सर्वस्व दान करती दिखती हैं, और कहीं सिर्फ अपने लिए जीती है। इस काल ने शोषित और पीड़ित नारियों को भी महत्व और स्थान दिया है। समाजवाद और मनोविश्लेषण विज्ञान का चित्रण इस काल की खासियत रही है। रचनाओं में नए–नए आयामों का प्रयोग कर इस काल के कवियों ने इस काल के नाम को सार्थक किया है।

नई कविता का एक अर्धवार्षिक सन् 1954 में निकाला गया। जिसके संपादक डॉक्टर जगदीश चंद्र गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी थे। इस संकलन में प्रयोगवादी कविता को ही मूल रूप से नाम बदलकर स्थान दिया गया था। पुरुषों के संबंध में नारी के रूपों को स्पष्ट करना ही इस समय उद्देश्य रहा। बनावटी सन्यास, दिखावटीपन आदि पर प्रहार किए गए। इस काल में भी नारी के सभी रूपों पर यहाँ तक कि वेश्या और तवायफ पर भी कविता लिखी गई है। नारी – विमर्श इस काल में अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखता है, इस काल में देशभक्ति कविताएं भी प्रचुर मात्रा में लिखी गई। साथ ही साथ पौराणिक और परंपरागत काव्य कथा को भी नई दृष्टि से निरूपित किया गया। हास्य रस के कवियों ने भी नारी को सूक्ष्म दृष्टि से देखने के बाद ही उसका वास्तविक चित्रण किया। इस काल में भी नारी के वासनात्मक रूप की प्रधानता दिखती है। साथ ही कहीं उसके रूप गुण पर नजरें गड़ाए उसके सौंदर्य की प्रशंसा तो, कहीं क्रांतिकारी रूप में समाज सुधार करती हुई दिखती हैं। मूल रूप से कहा जाए तो इस काल में भी नारी के विकास और ह्रास दोनों रूप सामने आते हैं।

आज के आलोच्यकालीन पृत्सत्तात्मक समाज में नारी स्वयं की स्वतंत्र पहचान बनाने के लिए अविराम संघर्ष कर रही है। अवनी से अंबर तक विश्व के हर कोने

में प्रत्येक क्षेत्र में नारी अपने वर्चस्व का लोहा मनवा रही है। अपनी अलग पहचान बनाने के लिए नारी को काफी मशक्कत करनी पर रही है। मानसिक शारीरिक और आर्थिक तीनों प्रबल रुकावट मिलकर भी नारी के बुलंद हौसले और आगे बढ़ने की सच्ची लगन को भूमिसार नहीं कर पा रहे हैं, कुछ हद तक उनके प्रगति मार्ग के रोड़े अवश्य बन जाते हैं। पर इसका यह आशय बिल्कुल नहीं है की यह रोड़े नारी प्रगति का मार्ग अवरुद्ध करते हैं, बल्कि उनकी आगे बढ़ने की चाह को और भी मजबूत बना देते हैं – कुछ ऐसे ही भाव को व्यक्त कर रही है यह पंक्तियाँ–

''पथ की तृष्णा और बढ़ेंगे,
जब पांव में पढ़ते छाले हैं।'
कामयाबी कदम चूमती है,
मुश्किलों से जो ना हारे,
कामयाबी उसी को पुकारे।"

आशय यह है कि तमाम रुकावटों पर नारी की चाह भारी पड़ रही है, वह अपनी उन्नति की ओर निरंतर बढ़ रही है। यह काल उनकी अवनति से उन्नति की ओर बढ़ने की जीवन संघर्ष की गाथा बयाँ कर रहा है।

साठोत्तरी रचनाकारों ने नारी के मन की सूक्ष्म से सूक्ष्मतर अभिव्यक्ति को अपनी रचना का विषय बनाया है। पुरुषों का एकाधिकार को चुनौती, उसका खंडन इस काल की रचनाओं में बुलंदी पाती है। इस कारण ग्लोबलाइजेशन में अधिकार, पूँजीवाद, उपभोक्तावाद, उपनिवेशवाद, फैशन, प्रोफेशन आदि कविता के विषय बन गए हैं। कविता इस विषयों का गहन और गंभीर अध्ययन कर समाज का वास्तविक रूप उजागर कर रही है।

सदियों से पित्तसत्तात्मक भंवर जाल में फंसी नारी की अंतरव्यथा को इस काल में आवाज मिली। प्रायः भारतीय नारी को कुदरत का अनमोल तोहफा, ममता का सागर, मोहब्बत का दरिया मानकर इसे ऊंचा स्थान तो दिया गया लेकिन इसके साथ–साथ ही इसके त्याग को इसका फर्ज बनाकर इसका शोषण भी किया जाता रहा। सहनशीलता का वास्ता देकर उनका अनुचित लाभ उठाया जाने लगा। नारी का अनुचित लाभ लेने का उत्तरदाई सिर्फ पुरुष वर्ग ही नहीं है बल्कि पुरुष वर्ग नारी का साथ पाकर ही नारी का लाभ उठाता है। साफ तौर पर कहें तो नारी ही हमेशा से नारी की दुश्मन रही है, लेकिन इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि वह नारी वर्ग की अवनति चाहती है, बल्कि वह भी स्वयं की उन्नति ही चाहती है, सिर्फ मानसिकता संकीर्ण और ओछी होती है। इस वर्ग में ज्यादातर कम पढ़ी–लिखी और अनपढ़ नारियाँ आती है। यही नारियाँ थोड़े से मार्गदर्शन से या पुरुषों द्वारा उनके उन आदतों का सिर्फ अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करने पर अपने व्यवहार में बदलाव भी ले आती हैं।

साठोत्तरी कविताओं में नारी अपने गुण–दोष दोनों के साथ चित्रित होती है। ऐसी शख्सियत के रूप में सामने आती है जो अपने गुण और दोष दोनों को दृढ़ता के साथ एक्सेप्ट करती हैं। अपनी जिम्मेदारियों से मुंह नहीं मोड़ती। अपना बयान देना अपना हक समझती है नारी के इसी रूप को उजागर कर रही है ये पंक्तियाँ–

नारी का सम्मान करो,
मत इसका अपमान करो।
पढ़ी–लिखी या अनपढ़ है,
इस पर जुल्म अनुचित है।
ममता इसका धर्म सही,
लेकिन यह अपराजित है।
यह जब जिद पर आती है,
एक तूफान उठाती है।
यूं तो रूप है,
दुर्गा का
पर काली भी बन जाती है।

नारी के इन बदलते हुए रूपों में इतिहास के बदलते हुए संदर्भ और संवेदना दिखती है।

यदि हम साठोत्तरी काल में कवियों की दृष्टि में नारी को देखें तो हम पाते हैं कि उन्होंने उनके उत्थान और पतन पर या उत्थान और पतन के बदले और बदलते आयामों पर ही सिर्फ चर्चा नहीं की है बल्कि उनके कारणों पर भी विचार और विमर्श किया। साथ ही साथ उस से होने वाले फायदे और नुकसान से भी अवगत कराया।

आज साठोत्तरी नारी के दिलों–दिमाग में यह बातें आती हैं–

जिंदगी है देन खुदा की
जीने का हक मेरा है।
पाव जमी पर है,
आसमां छूने का हक मेरा है।

इन सारी परिस्थिति के मध्य नारी के आगे बढ़ने के मार्ग में यदि नारी की ही पुरानी रूढ़िवादी मानसिकता उसके पांव की बेरिया बनने लगती हैं तो नारी स्वयं को यह समझ कर आगे बढ़ने की कोशिश करने लगती है कि कुछ पाने के लिए कुछ खोना पड़ता है। इस पंक्ति से कुछ ऐसे ही आशय से निकल रहे हैं –

'' जिंदगी से ऊब गई मैं,
जब देखा हर मोड़ पर संघर्ष का अंबार है ।
सोचा
यह जिंदगी नीरस और बेकार है।
देख बसंत को पूछा मैंने ?
भाई बसंत तेरी मदमस्त खुशी का राज क्या है?
उसने बड़ी गंभीरता से कहा
जराझुक कर देख
मेरी इमारत भी
पतझड़ की बुनियाद पर है।

अब तक के कार्यों में यदि नारी की स्थिति पर दृष्टि डाली जाए तो वह आडंबर और विडंबना से भर रहा है। अपने आपको मैं के रूप में स्थापित करने के लिए उन्हें स्वयं को पहचानना होगा। अपने आप को दृढ़ और मजबूत करना होगा। अपना स्थान बनाने और बरकरार रखने के लिए, संघर्ष से इस दुनिया से दो– चार करना होगा।

आज नारी चाहे वह एक झुग्गी की हो या बंगले की उसे सरकार समाज या संस्था किसी के भी द्वारा हो शिक्षा व रोजगार देकर उसे स्वावलंबी बनाया जा रहा है तो वही बड़े पैमाने पर बाजारीकरण की दुनिया में नारी के

अंगों की प्रदर्शनी लगाकर उसे गर्त में गिराया भी जा रहा है। एक मुहावरा है पेड़ की फुंगी पर चढ़ा कर जड़ काट देना, कम शब्दों में यदि कहा जाए तो नारी की स्थिति आज यही है। आज भी उनका दोधारी शोषण किया जा रहा है। जो दूसरे पर निर्भर है उनका भी और जो खुद पर निर्भर है उनका भी। लोग जब तक रिश्तो को वस्तु की तरह व्यवहार करते रहेंगे तब तक परिस्थिति यही रहेगी, इसे सुधारने के लिए हमें हमारे रिश्तो को सुधारना जरूरी है। रिश्तो में जीवन का होना जरूरी है ना कि जीवन में सिर्फ रिश्तों का।

अध्ययन का उद्देश्य

नर और नारी दोनों को एक स्वच्छ परिवार के निर्माण से लेकर एक स्वच्छ विश्व निर्माण तक एक दूसरे की कमियों के पूरक व खूबियों के सहभागी बन आगे बढ़ने से ही सही मायने में मानव व मानवी का आधिपत्य कायम होगा और एक सशक्त सर्वगुण संपन्न विश्व का निर्माण होगा।

निष्कर्ष

नारी यदि निर्मल झड़ना है, तो पुरुष उस पर्वत के समान है जो बाहरी तौर पर अपनी कठोरता से उसकी निर्मलता को सुरक्षित रखता है उसे संचालित करता है। यदि पर्वत की कोई अतिरिक्त शिला झरने के मार्ग में आ जाए तो उसका मार्ग अवरुद्ध या कठिन हो जाता है। उसी तरह यदि पुरुष कि हम शक्ति नारी पर आरोपित होने लगती है तो जीवन शैली बिगड़ जाती है। यदि सुधारा ना जाए तो स्थिति बद से बदतर हो जाती है। ऐसा भी नहीं है कि पुरुष हमेशा जानबूझकर अपने अहं शक्ति को नारी पर आरोपित करते हैं, बल्कि अपने सूक्ष्म सोच की वजह से अपने स्वाभिमान को अहं में परिणत कर नारी पर थोप देते हैं। अहं और स्वाभिमान के बीच एक झीनी सी चिलमन होती है जिसे यदि संभाल कर प्रयोग न किया जाए तो रिश्ते भी इन्हीं झीनी चिलमन की तरह जल्द ही तार–तार हो जाते हैं ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *हुंकार– दिनकर*
2. *जयशंकर प्रसाद –कामायनी*
3. *फणीश्वर नाथ रेणु –लाल पान की बेगम*
4. *मैथिलीशरण गुप्त –भारत भारती*
5. *रामायण–केवल अध्ययन*
6. *महाभारत –केवल अध्ययन*